सी० बी० (दो) संख्या 258

लोक-सभा

निर्वाचन विधि में संशोधन सम्बन्धी संयुक्त समिति

प्रतिवेदन--भाग दो

लो क-स भा स चि वा ल य

न ई दि ल्ली

फरवरी, 1972/फाल्गुन, 1893 (शक)

मूल्य : 0.35 रुपये

निर्वाचन विधि में संशोधन सम्बन्धी संयुक्त समिति

के प्रतिवेदन-भाग दो

का

शुद्धि - पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	के स्थान पर	पढ़ें
चार	8	श्री एच.जे. परांजपे	श्री एच.जी.परांजपे
(पांच)	3	दौ	दो
(पांच)	10	प्राक्कथन	प्रकाशन
2	25	मनोन त	मनोनीत
3	24	क ना	करना
8	18	समक्न	समेकन
9	20	परिप टियां	परिपाटियां
12	7	ारणा	धारणा

विषय सूची

	पृष्ठ
संयुक्त समिति की रचना	(तीन)
एक. प्राक्कथन	(पांच)
दो. प्रतिवेदन	1
क. निर्वाचन आयुक्तों तथा क्षेत्रीय निर्वाचन आयुक्तों की नियुक्ति .	1
ख. निर्वाचन प्रणाली में सुधार	2
ग. मतदान की आयु को कम करना	3
घ. मतगणना की प्रणाली	4
ङ. निर्वाचन कालावधि के दौरान राजनीतिक दलों के लिये प्रसारण सुविधायें	5
च. निर्वाचन विधि के अन्तर्गत विरचित नियम . .	5
छ. लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1950 और 1951 का समेकन .	8
ज. निर्वाचनों के दौरान मंत्रियों द्वारा सरकारी तंत्र का प्रयोग .	8
झ. निर्वाचन की अधिसूचना जारी करने के बाद सार्वजनिक कल्याण की योजनायें आरम्भ करने पर प्रतिबन्ध . . .	8
ञ. राजनीतिक परिषद् का गठन	9
ट. दलबदल	9
तीन. विमति टिप्पण	11

निर्वाचन विधि में संशोधन सम्बन्धी संयुक्त समिति

समिति की रचना

श्री जगन्नाथ राव—सभापति

सदस्य

लोक-सभा

2. श्री एस० एम० बनर्जी
*3. श्री आर० डी० भण्डारे
4. श्री सोमनाथ चटर्जी
5. श्री अमर नाथ चावला
6. श्री एच० आर० गोखले
7. श्री कृष्णन मनोहरन
8. श्री श्यामनन्दन मिश्र
9. श्री के० नारायण राव
10. श्री सतीश चन्द्र
11. श्री शिव नाथ सिंह
12. पण्डित डी० एन० तिवारी
13. श्री अटल बिहारी वाजपेयी
14. श्री पी० वेंकटासुब्बया

राज्य-सभा

15. श्री लाल के० आडवाणी
16. श्री नारायण कल्याण कृष्णन्
17. श्री वी० बी० राजू
18. श्री त्रिलोकी सिंह
19. श्री अवधेश्वर प्रसाद सिंह
20. श्री सवाई सिंह सिसोदिया
21. श्री महावीर त्यागी

---

*श्री रसिक लाल पारिख के स्थान पर जिन्होंने त्यागपत्र दे दिया था, 6 जुलाई, 1971 से नाम निर्देशित ।

न्याय और विधि मंत्रालय क प्रतिनिधि

1. श्री एन० डी० पी० नम्बूद्रिपाद, संयुक्त सचिव और विधायी परामर्शदाता ।

2. श्री ए० के० श्रीनिवास मूर्ति, उप-विधायी परामर्शदाता ।

3. श्री एन० श्रीनिवासन, उप-सचिव ।

4. श्री एच० सी० विरमानी, अवर सचिव ।

सचिवालय

श्री पी० के० पटनायक——**संयुक्त सचिव** ।

श्री एच० जे० परांजपे——**उप-सचिव** ।

निर्वाचन विधि में संशोधन सम्बन्धी संयुक्त समिति का प्रतिवेदन

भाग--दो

एक

प्राक्कथन

मैं, निर्वाचन विधि में संशोधन सम्बन्धी संयुक्त समिति का सभापति, समिति की ओर से यह प्रतिवेदन का भाग--दो प्रस्तुत करता हूं जिसमें निर्वाचन विषयों से सम्बन्धित अन्य सिफारिशें अन्तर्विष्ट हैं। समिति का प्रतिवेदन भाग-एक 18 जनवरी, 1972 को अध्यक्ष महोदय को प्रस्तुत किया गया था और लोक-सभा के प्रक्रिया तथा कार्य-संचालन सम्बन्धी नियम 280 के अन्तर्गत अध्यक्ष महोदय ने प्रतिवेदन के सभा में प्रस्तुत किये जाने से पूर्व उसके मुद्रण, प्राक्कथन और परिचालन का आदेश दे दिया था। प्रतिवेदन की एक प्रति 24 जनवरी, 1972 को न्याय और विधि मंत्रालय (विधायी विभाग) को भी भेजी गई थी।

2. प्रतिवेदन--भाग एक प्रस्तुत करने के बाद समिति की छः बैठकें हुईं।

3. समिति ने यह प्रतिवेदन--भाग दो 23 फरवरी, 1972 को स्वीकृत किया।

दो

प्रतिवेदन

क. निर्वाचन आयुक्तों तथा प्रादेशिक निर्वाचन आयुक्तों की नियुक्ति

संविधान के अनुच्छेद 324 (2) में एक निर्वाचन आयोग स्थापित करने की व्यवस्था है जिसमें मुख्य निर्वाचन आयुक्त तथा, यदि कोई हों तो, अन्य उतने निर्वाचन आयुक्त होंगे, जितने कि राष्ट्रपति समय समय पर नियत करे। खंड (4) के अन्तर्गत एक उपबन्ध यह भी है कि निर्वाचन आयोग के कृत्यों के पालन में आयोग को सहायता करने के लिये, इसके अतिरिक्त प्रत्येक साधारण निर्वाचन से पूर्व और प्रादेशिक आयुक्तों की नियुक्ति की जा सकेगी। 1952 के प्रथम साधारण निर्वाचनों से पूर्व, संविधान के उपबन्धों का अनुसरण करते हुये, 2 अथवा 3 प्रादेशिक निर्वाचन आयुक्तों की नियुक्ति की गयी थी परन्तु बाद में इस व्यवस्था को त्याग दिया गया। इसके स्थान पर उपनिर्वाचन आयुक्तों के पद जो निर्वाचन आयोग में सर्व प्रथम 1956 में बनाये गये थे तभी से चले आ रहे हैं जिसका कारण यह है कि देश के निर्वाचन कार्य के सम्बन्ध में यह व्यवस्था उपयोगी सिद्ध हुई है और प्रत्येक राज्य की राजधानी में स्थित निर्वाचन विभाग की स्थिति एक और संयुक्त अथवा उप मुख्य निर्वाचन आफिसर की नियुक्ति से और दृढ़ हुई है। निर्वाचक नामावलियां तैयार करने से सम्बद्ध सभी मामलों में तथा संसद् एवं राज्य विधान मंडलों और राष्ट्रपति तथा उप-राष्ट्रपति के पदों के लिये निर्वाचन कराने के मामलों में पूर्ण अधिकार मुख्य निर्वाचन आयुक्त को प्राप्त हैं।

2. देश में वयस्क मताधिकार पर आधारित निर्वाचन स्वतंत्र तथा निर्दोष रूप से कराने के लिये यह अत्यावश्यक है कि निर्वाचन कार्य समूचे देश में फैलाया जाये तथा बहुशाखी बनाया जाये और यह कि दूरस्थ ग्रामों में भी यह कार्य इस ढंग से किया जाये जिससे कि इसके प्रति लोगों का विश्वास जागृत हो। निर्वाचन तंत्र कुछ इस प्रकार का होना चाहिये कि प्रत्येक ग्राम, कस्बे, तथा नगर में यह स्वतंत्र, निष्पक्ष तथा न्यायोचित ढंग से कार्य कर सके। धीरे-धीरे निर्वाचनों का पंचवार्षिक स्वरूप समाप्त होता जा रहा है और यह यदि प्रतिवर्ष नहीं तो कम से कम हर दूसरे वर्ष हमारे विशाल देश के किसी न किसी भाग में होते ही रहते हैं। अतः निर्वाचन एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया बन गये हैं जिससे निर्वाचन आयोग पर बहुत काम आ पड़ा है। निर्वाचन आयोग के कार्य की विशालता तथा इसको जो कार्य करने होते हैं उनकी जटिलता काफी स्पष्ट है और उनका विस्तार से उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं है। निर्वाचनों के प्रभावी रूप से अधीक्षण, निदेशन तथा नियंत्रण का भार उठाना एक अकेले व्यक्ति के लिये बहुत भारी कार्य है और परिणामतः उसकी छीछालेदर किये जाने तथा उस पर मनमानी करने और पक्षपात करने के दोषारोपण किये जाने की सम्भावना रहती है। अतः समिति सिफारिश करती है कि निर्वाचन आयोग एक बहु-सदस्यीय संस्था होनी चाहिये जैसा कि संविधान के अनुच्छेद 324 (2) में कल्पना की गई है। समिति का विचार है जहां मुख्य निर्वाचन आयुक्त के कृत्यों का पालन करने में उसकी सहायता के लिये आवश्यक निर्वाचन आयुक्तों की ठीक ठीक संख्या निश्चित करने के बारे में निर्णय लेने का काम तो सरकार पर छोड़ दिया जाये, वहां समिति यह भी समझती है कि एक परि-वर्द्धित आयोग निर्वाचनों से सम्बन्धित जिम्मेदारियां अधिक प्रभावी ढंग से निभा सकेगा और एक व्यापक आयोग अपने अर्द्धन्यायिक कृत्यों के पालन में सामान्य तौर पर मान्य निर्णय ले सकेगा तथा सम्मान प्राप्त करने में सफल रहेगा।

3. ऐसे बहुत से मामले हैं जिन पर निर्वाचन विधि के उपबंधों के अंतर्गत निर्वाचन आयोग के आदेश आवश्यक हैं और दिल्ली स्थित निर्वाचन आयोग के लिए यह सम्भव नहीं है कि वह प्रत्यक्ष जानकारी मिले बगैर तत्काल और उपयुक्त कार्यवाही कर सके। अतः समिति यह भी सिफारिश करती है कि निर्वाचन आयोग की अपने कृत्यों का पालन करने में सहायता करने के लिए प्रादेशिक निर्वाचन आयुक्तों की भी नियुक्ति की जाए जैसा कि संविधान के अनुच्छेद 324(4) में परिकल्पना की गई है।

ख. निर्वाचन प्रणाली में सुधार

4. संविधान के अनुच्छेद 327 में निर्वाचन से संबंधित अथवा निर्वाचन संबंधी सभी मामलों में संसद् को कानून बनाने की शक्ति प्रदत्त की गयी है। 1947 में जब भारत स्वतंत्र हुआ और उसने संसदीय लोकतंत्र अपनाने की इच्छा प्रकट की तो भारत ने अपनी निर्वाचन प्रणाली के लिए बहुमत प्रणाली चुनी जिसका कारण यह था कि पूर्ववर्ती दस वर्षों में वह इस प्रणाली से सुपरिचित हो गया था।

5. समिति ने "सूची प्रणाली" समेत आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली को, जो कुछ देशों में प्रचालित है, अपनाने के प्रश्न पर विचार किया। विभिन्न प्रणालियों के गुणों व दोषों पर चर्चा की गई। यह आमतौर पर स्वीकार किया गया कि बहुमत प्रणाली निर्वाचन व्यवस्था में जुए की सी स्थिति उत्पन्न करती है जिससे निर्वाचनों के बारे में पहिले से कुछ भी नहीं कहा जा सकता। यह तर्क दिया गया कि 'सूची प्रणाली' दल प्रणाली को दृढ़ बनाती है और मतदाता को राजनैतिक आधार पर मत देने के लिए मजबूर करती है जिससे अवसरवादी स्वतंत्र उम्मीदवार मैदान से साफ हो जाते हैं। सूची प्रणाली से सभी दलों को न्यायोचित प्रतिनिधित्व प्राप्त होना निश्चित होता है और अल्प-संख्या में मत प्राप्त करने के आधार पर किसी दल के सत्ता में आने का खतरा काफी हद तक समाप्त हो जाता है।

इससे मतदाताओं की राजनीतिक शिक्षा को बढ़ावा देने में भी सहायता मिलती है और इससे चाहे जाति तथा सम्प्रदाय का प्रभाव पूर्ण रूप से समाप्त भले ही न हो सके किन्तु कम अवश्य हो जाएगा। यह बताया गया कि बहुमत पद्धति में हर दल एक एकल-सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्र में एक उम्मीदवार मनोनीत करता है जो बहुसंख्यक जाति का होता है और इससे दल द्वारा उम्मीदवार के नामनिर्देशन से लेकर मतदाता द्वारा उम्मीदवार के निर्वाचन तक पूरी प्रक्रिया में साम्प्रदायिकता का दोष व्याप्त हो जाता है। इस प्रकार अप्रत्यक्ष रूप से सूची प्रणाली से एकता भी बढ़ेगी। यह दल बदलने के अभिशाप के लिए एक प्रभावी उपचार भी सिद्ध होगा। सूची प्रणाली से यह लाभ होने का भी दावा किया जाता है कि इससे उप-चुनाव की आवयश्कता नहीं रहती।

6. दूसरी ओर यह कहा गया कि भारत जैसे देश में सूची प्रणाली को स्वीकार करना कठिन होगा। जनसाधारण से अपनी पूर्विकतायें बताने की आशा नहीं की जा सकती। राष्ट्रपति के पद के लिए निर्वाचन में भी, जिसमें मतदाता प्रबुद्ध होते हैं, कुछ मत अवैध घोषित हो जाते हैं। यह कहा गया कि इस विशाल देश में सूची प्रणाली का कोई परीक्षण करना संभव नहीं हो सकेगा। 'बेल्जियम, हालैंड, नार्वे, स्वीडन, डेनमार्क और फिनलैंड जैसे यूरोप के कुछ अपेक्षाकृत छोटे देशों में स्थानीय परिवर्तनों सहित सूची प्रणाली प्रचलित है। इन छोटे देशों में से प्रत्येक देश ने अपेक्षाकृत कम संख्या में स्थायी दल बनाए थे ताकि मिली-जुली और अल्पसंख्यक सरकारें

लम्बी अवधि तक बनी रह सकें और निर्वाचनों के परिणामस्वरूप प्रतिनिधित्व में होने वाले अल्प परिवर्तनों से प्रायः उन पर कोई प्रभाव न हो । पश्चिम जर्मनी तथा इटली में भी कुछ सीमा तक स्थानीय परिवर्तनों सहित सूची प्रणाली प्रचलित है परन्तु वहां पर स्थिति इतनी अच्छी नहीं है जितनी उपरोक्त छोटे देशों में है । ब्रिटेन, संयुक्त राज्य अमरीका, कनाडा अथवा आस्ट्रेलिया में यह प्रणाली प्रचलित नहीं है । फ्रांस में भी अब इसका अनुसरण नहीं किया जाता है । इस प्रणाली में बड़े दलों का विभाजन करने और पृथक पृथक छोटे दल बनाने तथा उनके स्वावलम्बन को बढ़ावा देने की प्रवृत्ति है । सूची प्रणाली से पृथकवादी विचारधारा को बढ़ाव मिलता है जो ब्रिटेन, कानाडा, आस्ट्रेलिया, भारत आदि में प्रचलित एकल सदस्यीय बहुमत प्रणाली के प्रतिकूल है ।

7. समिति का विचार है कि निर्वाचन आयोग ने, जिसकी इस मामले में राय ली गई थी, लोक-सभा और राज्य विधान सभाओं के लिए निर्वाचनों में सूची प्रणाली या समानुपातिक प्रतिनिधत्व प्रणाली के स्थान पर कोई अन्य परिवर्तित प्रणाली आरम्भ करने का पूरी तरह विरोध किया था ।

समिति की राय है कि लोक सभा और राज्य विधान सभाओं के चुनाव की वर्तमान प्रणाली बनी रहने दी जाए । तथापि सरकार लोक-सभा और राज्य विधान सभाओं के निर्वाचनों के संबंध में सूची प्रणाली या कोई अन्य कोई प्रणाली अपनाने की संभावना पर विचार करने के लिए प्रख्यात न्यायविदों, संवैधानिक विधि विशेषज्ञों आदि की एक विशेषज्ञ समिति नियुक्त कर सकती है ।

ग. मतदान की आयु को कम करना

8. संविधान के अनुच्छेद 326 के वर्तमान उपबंधों के अधीन एक व्यक्ति जो 21 वर्ष की अवस्था से कम नहीं है तथा अन्यथा अर्ह है, मतदाता के रूप में पंजीबद्ध होने का हकदार है ।

9. मतदान की आयु का प्रश्न हाल के वर्षों में बहुत महत्वपूर्ण हो गया है । यह सर्वविदित है कि पश्चिमी देशों के लोकतंत्रों में मताधिकार का विस्तार धीरे धीरे, क्रमिक तथा उत्तरोत्तर हुआ । उदाहरणार्थ, ब्रिटेन को सम्पूर्ण व्यस्क मताधिकार प्रणाली आरम्भ करने में लगभग एक शताब्दी लगी । दूसरी ओर भारत को सम्पूर्ण व्यस्क मताधिकार का केवल 20 वर्ष का अनुभव है । अतः इस प्रश्न पर गंभीर रूप से विचार करना आवश्यक है कि क्या मतदान की आयु को 21 वर्ष से घटाकर 18 वर्ष करने की दृष्टि से संविधान के उपबंधों में संशोधन किया जाये । समिति के कुछ सदस्यों का विचार था कि यदि मतदान की आयु घटा कर 18 वर्ष कर दी गयी तो इससे देश में असंख्य समस्यायें पैदा हो जायेंगी । कुछ तो 18–21 वर्षों के आयु वर्ग के बीच के व्यक्तियों को शामिल करने से और कुछ जनसंख्या में वृद्धि की भारी दर के कारण मतदाताओं की संख्या में बहुत अधिक वृद्धि हो जायेगी । इस से सैक्षणिक संस्थाओं में भी दलगत राजनीति घुस जाएगी । जिससे समय-समय पर उपद्रव होंगे और छात्र अपनी पढ़ाई में भी रूचि नहीं लेंगे । सबसे बड़ी बात यह है कि इतने अधिक मतदाताओं के लिए प्रबंध करने में सरकार पर बहुत अधिक वित्तीय बोझ पड़ेगा । समिति के अन्य सदस्यों का विचार था कि ऐसा करने से युवा पीढ़ी में लोकतांत्रिक प्रक्रिया में भाग लेने की भावना पैदा होगी । उनके अनुसार 18–21 वर्ष के आयु वर्ग को मतदान के अधिकार से वंचित रखने का कोई ठोस कारण नहीं है, विशेष रूप से तब जबकि विधि के सभी प्रयोजनों के लिए उनको व्यस्क माना जाता है और अपने कार्यों को करने के लिए सक्षम समझा जाता है ।

विधि और न्याय मंत्री ने बताया कि सरकार ने इस संबंध में कोई निश्चय नहीं किया है ।

10. उपर्युक्त दोनों दृष्टिकोणों पर विचार करने के बाद समिति ने निश्चय किया कि मतदान की आयु को 21 वर्ष से घटाकर 18 वर्ष कर दिया जाये। इसलिए, समिति सिफारिश करती है कि संविधान के अनुच्छेद 326 में तद्नुसार संशोधन किया जाये।

घ. मतगणना प्रणाली

11. इस समय प्रवृत रूप में निर्वाचन संचालन नियम, 1961 के नियम 56(1) में अन्य बातों के साथ-साथ यह उपबंध है कि एक निर्वाचन क्षेत्र में प्रयुक्त सभी डिब्बों से निकाले गए मतपत्रों को एक साथ मिलाया जाएगा। तत्पश्चात् उनको छोटे-छोटे बण्डलों में बांट कर उनकी जांच की जाएगी।

12. समिति के समक्ष यह सुझाव दिया गया कि निर्वाचन क्षेत्र-वार मतगणना की नयी प्रणाली, जो 1971 में आरम्भ की गयी थी, समाप्त कर दी जानी चाहिए। समिति ने इस प्रश्न पर विस्तारपूर्वक विचार किया और इस संबंध में निर्वाचन आयोग द्वारा व्यक्त किए गए विचारों पर ध्यान दिया। निर्वाचन आयोग ने बताया था कि मार्च, 1971 में हुए साधारण निर्वाचनों से पूव उसे ऐसी बहुत सी शिकायतें मिली थीं कि मतगणना मतदान केन्द्रवार न की जाए क्योंकि इससे न केवल मतों की गणना करने वाले कर्मचारियों को अपितु अभ्यर्थियों तथा उनके गणना एजेंटों को भी यह पता लग जाता है कि एक विशेष मतदान केन्द्र से मत देने वाले अधिकांश मतदाताओं ने किस के पक्ष में अपने मत दिए हैं। परिणामों की घोषणा के पश्चात् प्रभावशील व्यक्तियों द्वारा अभित्रस्त किए जाने, दबाव डाले जाने और प्रपीड़ित किए जाने की आंशका के कारण मतदाता अपने मत डालने के लिए मतदान केन्द्र पर नहीं आते। आयोग ने महसूस किया कि इन शिकायतों में बहुत बल है। अतः सामान्य निर्वाचकों के हित में गणना प्रणाली में यथासम्भव परिवर्तन करना वांछनीय समझा गया।

13. समिति महसूस करती है कि छोटे पैमाने पर या बड़े पैमाने पर मतदाताओं का उत्पीड़न और उनको तंग किया जाना निन्दनीय और अलोकतान्त्रिक है और स्वतंत्र तथा निष्पक्ष निर्वाचन सुनिश्चित करने की दृष्टि से इस संबंध में उचित कार्यवाही की जानी चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं कि यदि अभित्रास, प्रपीड़न और अनुचित प्रभाव की बराई का सफलतापूर्वक मुकाबला करना है और इसे समाप्त करना है तो इसके लिए राजनीतिक, आर्थिक सामाजकि प्रशासनिक और कानूनी स्तरों पर भी अनुकूल कार्यवाही करनी होगी। परन्तु जब एक बार यह स्वीकार कर लिया गया है कि मतदाताओं का उत्पीड़न किया जाता है और उन्हें तंग किया जाता है, तो ऐसे उत्पीड़न को और उन्हें तंग किए जाने की बात समाप्त करने के मार्गोपाय ढूंढने में अवश्य ही कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। समिति यह भी महसूस करती है कि परिवर्तन करने में कोई असामान्य बात नहीं है। परिवर्तन करने से गणना की पूर्ववर्ती प्रणाली की कमियों को दूर अवश्य ही किया जा सकता है। निर्वाचन आयोग द्वारा अब आरम्भ की गयी नयी प्रक्रिया के अधीन समूचे निर्वाचन क्षेत्र के मतपत्रों को मिला दिया जाता है और कोई व्यक्ति यह नहीं जान सकता कि निर्वाचन क्षेत्र के किसी विशेष क्षेत्र में किसके पक्ष में मत डाले गए।

14. चर्चा के दौरान यह संदेह व्यक्त किया गया था कि क्या नयी प्रक्रिया लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम की धारा 64 क में निहित वास्तविक उपबंधों के अनुरूप है जिसमें यह उपबंध है कि गणना के समय मतपत्रों के विनष्ट हो जाने, खो जाने आदि की स्थिति में निर्वाचन आयोग निदेश देगा कि मतों की गणना बन्द करदी जाए और घोषणा करेगा कि उस मतदान केन्द्र या स्थान का मतदान शून्य समझा जाये और नए मतदान के लिए प्रबंध किए जायें। समिति को सूचित किया गया कि यदि धारा

64 क के अधीन अथवा किसी अन्य कारण से निदेश देने के लिए मतपत्रों को पृथक करने की आवश्यकता पड़े तो ऐसा बिना किसी कठिनाई के किया जा सकता है क्योंकि निर्वाचन संचालन नियम, 1961 के नियम 38 के अधीन मतपत्र मतदाता को देने से पूर्व प्रत्येक मतपत्र पर पीठासीन अधिकारी द्वारा उस मतदान केन्द्र का विशेष चिन्ह अंकित किया जाना होता है जिसमें मतपत्र का प्रयोग किया जाना हो। इसके अतिरिक्त ऐसे प्रत्येक मतपत्र के पीछे उसे मतादाता को देने से पूर्व पीठासीन अधिकारी को हस्ताक्षर करने होते हैं। अतः मतदान केन्द्र के विशेष चिन्ह तथा मतदान केन्द्र के पीठासीन अधिकारी के हस्ताक्षर के आधार पर मिलेजुले मतपत्रों का मतदान केन्द्र-वार अलग किया जा सकता है तथा उनका पुनः वर्गीकरण करना सरल है। तीसरे, रिटर्निंग आफिसर के रजिस्टर में मतपत्रों की संख्या दी होती है तथा प्रत्येक मतदान केन्द्र को दिए गए मतपत्रों की क्रम संख्या उसमें दी जाती है। प्रपत्र 16 में दिए गए मतपत्र लेखे से भी यह बात देखी जा सकती है।

अत: समिति सिफारिश करती है कि 1971 में आरम्भ की गई मतगणना की नयी प्रणाली को जारी रखा जाए।*

ङ. निर्वाचन कालावधि के दौरान राजनीतिक दलों के लिये प्रसारण सुविधायें

15. समिति ने इस प्रश्न पर विचार किया कि क्या राजनीतिक दलों को अपने चुनाव प्रचार के लिए आकाशवाणी पर प्रसारण की सुविधाएं दी जानी चाहिएं जैसाकि इस समय इंगलैंड में परम्परानुसार किया जाता है। 1952 में हुए साधारण निर्वाचन से पूर्व निर्वाचन आयोग ने सरकार को सलाह दी थी कि मान्यता प्राप्त राजनीतिक दलों में प्रसारण सुविधाओं का इस प्रकार विभाजन करना कठिन होगा जो पर्याप्त रूप से निष्पक्ष हो तथा जिससे आम जनता संतुष्ट हो और इस कारण इस प्रस्ताव को छोड़ देना पड़ा। 1952 के साधारण निर्वाचनों के पश्चात् मान्यता प्राप्त राजनीतिक दलों की संख्या बहुत कम हो गई और देश में उनकी तुलनात्मक सदस्य संख्या के बारे में सही जानकारी प्राप्त की जा सकती थी, अत: आयोग ने एक समझौता सम्पन्न करने के लिए पुन: प्रयास किए ताकि साधारण निर्वाचनों के समय नियमित तौर पर दलों द्वारा प्रसारण किए जा सकें परन्तु उपलब्ध प्रसारण के लिए समय को बांटने के आधार के संबंध में मुख्य राजनीतिक दलों में समझौता न हो सकने के कारण इस विचार को तिलांजलि देनी पड़ी। समिति का विचार है कि निर्वाचकों को शिक्षित करने के लिए लोक मत पहले भी प्रचार के इस महत्वपूर्ण माध्यम के पक्ष में था और अब भी है तथा समिति चाहती है कि निर्वाचन आयोग को इस संबंध में और आगे प्रयास करने चाहिए जिससे कि मान्यताप्राप्त दल भविष्य में अपने निर्वाचन अभियान में प्रसारण सुविधाओं का लाभ उठा सकें। समिति इस बात की सिफारिश करती है कि सभी मान्यता प्राप्त राजनैतिक दलों को समान समय दिया जाना चाहिए।

च. निर्वाचन विधि के अन्तर्गत विरचित नियम

16. 7 जनवरी, 1971 को भारत के राजपत्र (असाधारण) में प्रकाशित निर्वाचन संचालन (दूसरा संशोधन) नियम, 1971, मार्च 1971 में हुए आम चुनाव के बाद 29 मार्च 1971 को राज्य सभा के पटल पर रखे गये थे। राज्य सभा की अधीनस्थ विधान सम्बन्धी समिति ने, जिस ने उन परिस्थितियों की जांच की जिनके कारण पूर्वोक्त नियम बनाना आवश्यक हो गया, अपने 11वें प्रतिवेदन में निम्नलिखित सिफारिश की :

> "16. समिति का ध्यान इस तथ्य की ओर दिलाया गया कि देश की समूची निर्वाचन विधि की समीक्षा करने के लिए संसद् के दोनों सदनों की एक संयुक्त समिति नियुक्त

---

*श्री सोमनाथ चटर्जी का विमति टिप्पण।

की गई है। यद्यपि ऐसी समिति की नियुक्ति, इस समिति को, यदि यह ऐसा चाहती है तो ऐसे नियमों पर विस्तारपूर्वक विचार करने से प्रवारित नहीं करेगी किन्तु इस समिति ने ऐसा नहीं किया। तथापि समिति का विचार था कि यह मामला निर्वाचन विधि सम्बन्धी संसद् के दोनों सदनों की संयुक्त समिति के समक्ष लाया जाये और वह इस बात पर विचार करे कि क्या इस विधि में ही ऐसा कोई उपबन्ध किया जाये कि इसके अन्तर्गत विरचित नियम तब तक प्रवर्तित नहीं किये जायेंगे जब तक कि संसद् उनका अनुमोदन नहीं करती।"

17. समिति यह भी नोट करती है कि लोक-सभा की अधीनस्थ विधान सम्बन्धी समिति ने नियमों की विरचना और यदि उचित हो तो उनमें संशोधन करने के लिए उनको संसद् के सदनों के समक्ष रखने के प्रश्न पर सरकार के साथ परामर्श करके विचार किया। उनके प्रतिवेदनों के संगत उद्धरण नीचे दिये गये हैं :

पैरा 36, अधीनस्थ विधान सम्बन्धी समिति का तीसरा प्रतिवेदन, पहली लोक-सभा

"(1) कि भविष्य में उन अधिनियमों में जिनमें नियमों की विरचना करने आदि सम्बन्धी उपबन्ध अंतर्विष्ट हों, यह उल्लिखित किया जायेगा कि ऐसे नियम यथासम्भव शीघ्र सभा-पटल पर रखे जायेंगे;

(2) कि वे सभी नियम उनके प्रकाशन की तारीख से पूर्व 30 दिन की एक समान तथा कुल अवधि के लिए पटल पर रखे जायेंगे;

परन्तु जहां किसी नियम को प्रकाशन की तारीख से पूर्व पटल पर रखना समीचीन नहीं समझा जाये वहां ऐसे नियम को प्रकाशन के पश्चात् यथासम्भव शीघ्र पटल पर रखा जा सकेगा। तथापि, ऐसे नियमों को इस प्रकार पटल पर रखते समय उनके साथ एक व्याख्यात्मक टिप्पण लगाया जाना चाहिए जिसमें यह स्पष्ट किया गया हो कि इन नियमों को प्रकाशित करने से पूर्व सभा-पटल पर रखना समीचीन क्यों नहीं समझा गया; और

(3) कि भविष्य में नियमों की विरचना करने की शक्ति का प्रत्यायोजन प्राधिकृत करने वाले अधिनियमों में इस आशय के सुस्पष्ट उपबन्ध होंगे कि उनके अन्तर्गत विरचित नियमों में ऐसे परिवर्तन किये जा सकेंगे जो सभा करना चाहे।"

पैरा 78 और 79, अधीनस्थ विधान सम्बन्धी समिति का छठा प्रतिवेदन, पहली लोक सभा

"78. इस सिफ़ारिश के सम्बन्ध में विधि मंत्रालय ने समिति को सूचित किया है कि भविष्य में ऐसे विधेयकों में, जिनमें कार्यपालिका को नियम विरचित करने की शक्ति प्रत्यायोजित करने की व्यवस्था की गई हो, यथासम्भव निम्न आधार पर उपबन्ध अंतर्विष्ट किया जायेगा :—

"इस धारा के अन्तर्गत बनाये गये सभी नियम बनाये जाने के पश्चात् यथासंभव शीघ्र संसद् के दोनों सदनों के समक्ष कम से कम 30 दिनों के लिए रखे जायेंगे

और उनमें ऐसे उपान्तरण किये जा सकेंगे जो संसद् उस अधिवेशन में जिसमें उनको सभा-पटल पर रखा जाता है या उससे अगले अधिवेशन में कर सकेगी।

79. समिति विधि मंत्रालय के उपरोक्त सुझाव को स्वीकार करती है क्योंकि इससे उनका उद्देश्य पूरा हो जायेगा।"

18. तब से सभी अधिनियमों में उपरोक्त प्रकार का एक उपबन्ध होता है। केवल निम्नलिखित अपवाद हैं :

(एक) खान और खनिज (विनियमन तथा विकास) अधिनियम, 1957 ।

(दो) आवश्यक सेवाएं अनुरक्षण अधिनियम, 1968।

इन अधिनियमों के अन्तर्गत जारी किये गये नियमों/अधिसूचनाओं का संसद् के दोनों सदनों द्वारा अनुमोदन कराने का प्रावधान है। ये दो अधिनियम भिन्न हैं। खान तथा खनिज (विनियमन तथा विकास) अधिनियम लोक-सभा की अधीनस्थ विधान सम्बन्धी समिति की उपर्युक्त सिफारिश लागू होने से पहले तैयार किया गया था; जहां तक आवश्यक सेवाएं अनुरक्षण अधिनियम का सम्बन्ध है, इसका सम्बन्ध एक विशेष मामले से है, अर्थात् कुछ अधिसूचनाओं का किसी निश्चित अवधि के बाद विस्तार।

19. समिति महसूस करती है कि निर्वाचन विधि में यह उपबन्ध करना कि उसके अधीन विरचित नियम तब तक लागू नहीं होंगे जब तक कि उन्हें संसद् से अनुमोदन नहीं मिलता निम्नलिखित कारणों से उचित नहीं होगा :—

(एक) ऐसी आकस्मिक स्थिति आ सकती है जब कि लोकप्रतिनिधित्व अधिनियम 1950 और 1951 के अधीन बनाये गये आवश्यक तथा विधिसंगत नियमों को थोड़े समय में ही, जब संसद् का सत्र चालू न हो, प्रख्यापित करना पड़े।

(दो) राज्य सभा की अधीनस्थ विधान सम्बन्धी समिति के निम्नलिखित कार्यवाही सारांश से स्पष्ट है कि उसने स्वयं ऊपर उद्धृत की गई सिफारिश प्रस्तुत करते हुए यह स्वीकार किया था कि कुछ मामलों में जहां शीघ्र कार्यवाही की आवश्यकता हो, दोनों सदनों का पूर्व अनुमोदन प्राप्त करना आवश्यक नहीं है :

"अतः समिति ने यह सिफारिश करने का निर्णय किया कि महत्वपूर्ण विषयों से संबंधित विधानों में सरकार को यह उपबन्ध करना चाहिए कि तदधीन विरचित नियम, उन स्थितियों को छोड़कर जहां अविलम्ब कार्यवाही आवश्यक हो, तब तक लागू नहीं होंगे जब तक कि उन्हें संसद् का अनुमोदन नहीं मिल जाता।"

20. उपर्युक्त बातों को ध्यान में रखते हुए समिति का मत है कि 1950 और 1951 के लोक प्रतिनिधित्व नियमों की विद्यमान व्यवस्था को, जिसके अनुसार, नियमों को संसद् की दोनों सभाओं के सभा पटल पर रखने के बाद उनके उपान्तरण/बातिलीकरण का प्रावधान है, जारी रखा जाये। यह प्रावधान लोक सभा की अधीनस्थ विधान सम्बन्धी समिति की सिफारिश के अनुपालन में किया गया है।

तथापि, समिति अधीनस्थ विधान सम्बन्धी समिति के दूसरे प्रतिवेदन (पांचवीं लोक सभा) के पैरा 33 और 34 की ओर ध्यान आकर्षित करना चाहती है जिसमें अधीनस्थ विधान सम्बन्धी समिति ने पुनरीक्षित आदर्श धारा की सिफारिश की है जो इस प्रकार है :—

"इस अधिनियम के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा बनाया गया प्रत्येक नियम, अपने बनाये जाने के पश्चात् यथाशक्यशीघ्र, संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष, उस समय जबकि वह सत्र में हो, कुल मिला कर तीस दिन की कालावधि के लिए, जो कालावधि एक सत्र या दो क्रमवर्ती सत्रों में समाविष्ट हो सकेगी, रखा जायेगा और यदि जिस सत्र में वह ऐसे रखा गया हो उस सत्र या उसके अव्यवहित पश्चात् वाले सत्र के अवसान से पूर्व दोनों सदन नियम में कोई उपान्तरण करने के लिए सहमत हो जायें या इस बात पर सहमत हो जायें कि वह नियम नहीं बनाया जाना चाहिए, तो तत्पश्चात् नियम, यथास्थिति, ऐसे उपान्तरित रूप में ही प्रभावशाली होगा या उसका कोई प्रभाव न होगा, किन्तु ऐसे ही कि ऐसा कोई उपान्तरण या बातिलीकरण उस नियम के अधीन पहले ही की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना होगा।"

समिति सिफारिश करती है कि 1950 के अधिनियम के खंड 28(3) और 1951 के अधिनियम के खंड 169(3) में तदनुसार संशोधन किया जाय।

छः लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1950 और 1951 का समेकन

21. इस समय निर्वाचन विधि संसद् के दो अधिनियमों में शामिल है अर्थात् लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1950 और लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951। यह सुझाव दिया गया कि यदि इन दोनों अधिनियमों को समेकित किया जाये तो निर्वाचन विधि से सम्बन्धित सभी जानकारी सरलता से एक स्थान पर उपलब्ध होगी। अतः समिति चाहती है कि सरकार संसद् के इन दोनों अधिनियमों को एक अधिनियम में समेकित करने पर विचार करे।

ज. निर्वाचनों के दौरान मंत्रियों द्वारा सरकारी तंत्र का प्रयोग

22. एक सुझाव दिया गया कि किसी भी मंत्री को किसी भी निर्वाचन के सम्बन्ध किसी भी रूप में सरकारी परिवहन का किसी ढंग अथवा तरीकों से उपयोग करने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। समिति ने इस प्रश्न पर विस्तारपूर्वक विचार किया और समिति की राय है कि निर्वाचनों में शुद्धता और निष्पक्षता सुनिश्चित करने के लिए किसी प्रकार के निर्वाचन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सरकारी तन्त्र का उपयोग करने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। तथापि, समिति का विचार है कि यह एक ऐसा मामला है जिसे विधि में संशोधन करने की अपेक्षा परिपाटी द्वारा सुलझाया जाना चाहिए। राजनीतिक दलों को एक आचरण संहिता का विकास करना चाहिए जिसका अनुसरण सरकार के सदस्यों द्वारा किया जाये।*

झ. निर्वाचन की अधिसूचना जारी करने के बाद सार्वजनिक कल्याण की योजनायें आरम्भ करने पर प्रतिबन्ध

23. समिति ने एक और सुझाव पर भी विचार किया कि सरकार पर यह प्रतिबन्ध लगाया जाये कि वह निर्वाचन की अधिसूचना जारी किये जाने के बाद न तो सार्वजनिक कल्याण की कोई योजना

---

*श्री सोमनाथ चटर्जी का विमति टिप्पण।

आरम्भ करे और न ही निष्पादित करे। समिति का विचार है कि ऐसे मामलों पर राजनीतिक दलों द्वारा विचार किया जा सकता है और वे इस सम्बन्ध में सरकार के सदस्यों द्वारा अनुसरण हेतु आचरण संहिता तैयार करें।*

ञ. राजनीतिक परिषद् का गठन

24. समिति ने नोट किया कि दलबदल सम्बन्धी समिति ने अपने प्रतिवेदन के प्रथम भाग में यह विचार व्यक्त किया था :--

> "समिति का बराबर यह प्रबल मत रहा है कि राजनीतिक दलबदल के विरुद्ध कोई भी विधायी या संवैधानिक कार्यवाही के बावजूद भी इस समस्या का स्थायी हल आचरण संहिता अथवा परम्पराएं जो मूलभूत औचित्य और शिष्टाचार पर आधारित होंगी तथा जिनसे लोकतंत्रीय संस्थाएं व्यवस्थित होंगी**** के सम्बन्ध में राजनीतिक दलों के समझौते द्वारा ही हो सकता है, समिति को दिये गये सुझावों में से एक सुझाव यह भी था कि राजनीतिक दलों के नेताओं और स्थानीय जानकारी रखने वाले उन लोगों की एक समिति या बोर्ड बनाया जाये जिसमें अपनी निष्पक्षता, सत्यनिष्ठा और राजनीतिक तटस्थता के लिए देश में सुविख्यात व्यक्ति सम्मिलित किये जायें।

25. निर्वाचन विधि को ध्यान में रखते हुए समिति ने उपर्युक्त सुझाव पर विचार किया। निर्वाचनों के संचालन सम्बन्धी कई ऐसे मामले हैं जिनका विनियमन लिखित विधि के स्थान पर राजनीतिक दलों द्वारा बनाई गई परिपाटियों द्वारा बेहतर रूप में हो सकता है। समिति का विचार है कि यदि इस प्रकार की एक राजनीतिक परिषद् स्थापित की जाये जिसमें सभी मान्यता प्राप्त दलों के नेता सम्मिलित हों तो इससे परिपाटियां बनाने में सहायता मिलेगी। राजनीतिक परिषद् के कार्यचालन के ढंग के बारे में दो सुझाव दिये गये थे। एक सुझाव यह था कि यह प्रेस परिषद् के अनुसार होना चाहिए तथा दूसरा सुझाव यह था कि यह राष्ट्रीय एकता परिषद् के अनुसार होना चाहिए। समिति का विचार है कि यदि किसी राजनीतिक परिषद् की स्थापना का विचार स्वीकार कर लिया जाये तो उस परिषद् के ठीक-ठीक स्वरूप, रचना और उसके कार्यक्षेत्र का निर्धारण करना कठिन नहीं होगा।

ट. दल बदल

26. 8 दिसम्बर, 1967 को लोक सभा में स्वीकृत एक संकल्प के अनुसरण में सरकार ने गृह मन्त्री के सभापतित्व में एक समिति नियुक्त की थी जिसमें एक दल से दूसरे दल में निष्ठा प्रदर्शित करने वाले और अकसर दल बदलने वाले विधायकों की समस्या के सभी पहलुओं पर विचार करने और इस सम्बन्ध में सिफारिशें करने के लिए राजनीतिक दलों के प्रतिनिधि और संविधान-विशेषज्ञ शामिल हों।

27. समिति ने नोट किया कि 18 फरवरी, 1969 को यह प्रतिवेदन सरकार को प्रस्तुत किया गया और सभा पटल पर रखा गया। समिति ने यह भी नोट किया कि समिति की सिफारिशों को लागू करने के लिये निम्नलिखित व्यवस्था करने हेतु संविधान में संशोधन करना आवश्यक है :

(एक) कि यदि कोई व्यक्ति, जो अवर सदन का सदस्य नहीं है, प्रधान मंत्री/मुख्य मंत्री नियुक्त हो जाता है तो वह छः महीने के पश्चात् अपने पद पर तभी बना रह सकता है यदि इस बीच वह अवर सदन के लिये निर्वाचित हो चुका हो;

(दो) कि केन्द्र और राज्यों में मंत्रिपरिषद् का आकार एक सदनीय विधान मण्डल होने पर यह अवर सदन की सदस्य संख्या का 10 प्रतिशत और द्विसदनीय विधान मण्डल होने पर अवर सदन की सदस्य संख्या का 11 प्रतिशत हो ; और

---

*श्री सोमनाथ चटर्जी का विमति टिप्पण।

(तीन) कि कोई भी दल बदलने वाला विधायक मंत्री, संसदीय सचिव लोक सभा और राज्य विधान सभाओं में अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष, राज्य सभा का उप-सभापति अथवा राज्य विधान परिषदों का सभापति अथवा उप-सभापति, मुख्य सचेतक, उप-मुख्य सचेतक अथवा सचेतक अथवा सरकार के अधीन किसी लाभ के पद पर अथवा सरकार के नियंत्रणाधीन किसी स्थानीय अथवा अन्य प्राधिकरणों अथवा सरकार के स्वामित्व अथवा नियंत्रण में किसी निगम में अथवा उसके अन्तर्गत किसी लाभ के पद पर नियुक्ति के लिये पात्र नहीं होगा।

समिति को यह भी बताया गया कि संघ राज्यक्षेत्र अधिनियम, 1963 में भी कुछ संशोधन करना आवश्यक है।

28. समिति को यह भी बताया गया कि प्रधान मन्त्री ने इस मामले पर राजनीतिक दलों के नेताओं के साथ विचार-विमर्श किया है। सरकार राज्यों के मुख्य मन्त्रियों से भी परामर्श कर रही है।

उपरोक्त को ध्यान में रखते हुये समिति इस मामले पर अपने विचार प्रकट नहीं करना चाहेगी।

जगन्नाथ राव,

सभापति,

निर्वाचन विधि में संशोधनों सम्बन्धी

संयुक्त समिति।

नई दिल्ली ;

दिनांक 13 मार्च, 1972

23 फाल्गुन, 1893 (शक)

विमति-टिप्पण

प्रतिवेदन का भाग–दो इस देश में निर्वाचनों और निर्वाचन विधि से संबंधित कुछ मूलभूत प्रश्नों के बारे में है। मुझे खेद है कि उनमें से कुछ प्रश्नों के संबंध में मैं समिति के निष्कर्षों से सहमत नहीं हूं। मेरा विचार है कि यद्यपि प्रश्नों के महत्व को सामान्यतः समझा गया है परन्तु प्रतिवेदन में उनके सम्बन्ध में कारगर सुझाव नहीं दिये गये हैं।

2. मेरा यह विचार है कि मतगणना की पुरानी प्रक्रिया फिर से प्रारम्भ की जानी चाहिये। इस संबंध में दो रायें नहीं हैं कि निर्वाचन स्वतन्त्र तथा न्यायपूर्ण होने चाहियें और उनमें किसी प्रकार का कोई अभित्रास अथवा प्रपीड़न अथवा अनुचित दबाव नहीं डाला जाना चाहिये, लेकिन मैं नहीं समझता कि मतगणना की जो नई प्रक्रिया निकाली गयी है उसे किसी क्षेत्र विशेष में अपनाने मात्र से इस प्रकार की किसी कुप्रथा का अन्त हो जायगा। भारत में 1967 में हुए चौथे साधारण निर्वाचनों के सम्बन्ध में निर्वाचन आयोग के प्रतिवेदन में यह कहा गया था :—

> "नियमों में यह व्यवस्था है कि प्रत्येक मतदान केन्द्र के सम्बन्ध में मतगणना के परिणाम की पृथक्-पृथक घोषणा की जाये। कभी कभी आयोग को यह बताया गया है कि मतगणना की इस प्रणाली का स्वाभाविक परिणाम यह होता है कि इस बात का सबको पता लग जाता है कि छोटे मतदान क्षेत्रों के औसतन लगभग 1000 निर्वाचकों का किस राजनीतिक दल से संबंध है। कहा जाता है कि इसका परिणाम यह होता है कि उन क्षेत्र विशेष के लोगों का उत्पीड़न किया जाता है तथा उन्हें तंग किया जाता है जिन्होंने ज्यादातर सत्तारूढ़ दल के अभ्यर्थियों के विरुद्ध मत दिये। आयोग को संदेह है कि यह बात किसी विशेष सीमा तक सत्य भी है या नहीं और आयोग का विचार है कि इस निन्दनीय तथा लोकतन्त्र-विरोधी प्रथा के विद्यमान होने की बात सिद्ध करने के लिये इक्का-दुक्का दृष्टान्तों को बढ़ा चढ़ा कर बताया जाता है। गणना की वर्तमान प्रणाली में वास्तव में यह गुण है कि वह व्यवस्थित ढंग से की जाती है और यह बात बहुत सी मतपेटियों में प्राप्त मतपत्रों को पहले आपस में मिलाने, फिर 1000 अथवा 2000 के बंडल बनाने और तत्पश्चात गणना करने की प्रणाली को अपनाने, जिसका कि सुझाव दिया गया है, की स्थिति में समाप्त हो जायेगी। इस प्रणाली के रहते हुए भी राज नीतिक दलों को, यदि वे वास्तव में जानना ही चाहें तो, मोटे तौर पर यह पता लगाने में कठिनाई नहीं होगी कि किसी मतदान क्षेत्र विशेष में किस के पक्ष में अधिक मत डाले गये हैं।"

3. समिति के समक्ष ऐसा कोई विश्वासोत्पादक प्रमाण नहीं रखा गया जिससे यह पता चलता कि निर्वाचन आयोग द्वारा ऊपर कही गई बात अब वर्तमान परिस्थितियों में ठीक नहीं रही है। यदि मतदान केन्द्रवार परिणामों का पता न लगे तो भी किसी राजनैतिक दल या प्रत्याशी के लिए यह जानना कठिन नहीं होगा कि किसी क्षेत्र विशेष में किस प्रकार मतदान हुआ। मेरा विचार है कि इस दृष्टि से कि एक लोकतांत्रिक ढांचे में राजनैतिक दल उचित ढंग से कार्य कर सकें, यह आवश्यक है कि यह बात सर्वविदित होनी चाहिये कि किसी क्षेत्र विशेष में मतदाताओं ने अपने मताधिकार का किस प्रकार प्रयोग किया है। विभिन्न क्षेत्रों में मतदान की प्रवृत्ति के आधार पर कोई राजनैतिक दल यह जान सकेगा कि उसे

उन क्षेत्रों में कितने अधिक या कम मत प्राप्त हुए तथा उसके क्या-क्या कारण थे और वह उन दोषों को दूर करने का प्रयास करेगा। मैं समझता हूं कि मार्च, 1971 में हुए साधारण निर्वाचन से पूर्व अभित्रास अथवा प्रपीड़न आदि की जो शिकायतें की गई बताई जाती हैं उन्हें बढ़ा चढ़ा कर बताया गया और जहां तक मुझे स्मरण है समिति के सामने कोई विशिष्ट दृष्टान्त नहीं रखा जा सका। यदि किसी क्षेत्र विशेष या क्षेत्रों में इस प्रकार का भ्रष्ट आचरण किया जाता है तो उससे निपटने के लिए कानून में पर्याप्त उपबन्ध हैं। अतः मेरी राय है कि मतों की गणना करने की नई प्रणाली समाप्त कर दी जाये।

4. देश भर में यह धारणा बड़ी प्रबल है कि निर्वाचन के दौरान मंत्रियों द्वारा सरकारी तंत्र का दुरुपयोग किया जाता है तथा समिति महसूस करती है कि किसी चुनाव प्रचार में सरकारी तंत्र का प्रयोग नहीं करने दिया जाना चाहिये। मैं नहीं समझता कि इस बात का विरोध किया जायेगा कि ऐसा दुरुपयोग एक अपराध है जिसे अब समाप्त कर दिया जाना चाहिये। सत्तारूढ़ दल ही अपने चुनाव प्रचार के लिए सरकारी तंत्र का प्रयोग कर सकता है। इस दोष को यदि दूर किया जा सकता है तो इसका एकमात्र उपाय यह है कि इसे रोकने के लिये कुछ वैधानिक उपबन्ध किये जायें। मैं नहीं समझता कि यह एक ऐसा मामला है जिसके बारे में केवल परिपाटी या आचरण संहिता के आधार पर निर्णय किया जाना चाहिए। कोई परिपाटी या आचरण संहित कानूनी तौर पर मान्य नहीं होगी। इसे सत्तारूढ़ दल के विवेक पर छोड़ने के बजाय इस दोष को खत्म करने के लिए कठोर उपबन्ध करने के सम्बन्ध में सिफारिशें की जानी चाहिए थीं।

5. इसी प्रकार मैं समिति की उन सिफारिशों से सहमत नहीं हूं जो निर्वाचन के समय कोई जनकल्याण योजना हाथ में न लेने या पूरी करने तथा ऐसा करने के लिए कोई आश्वासन देने के बारे में सरकार पर प्रतिबन्ध लगाने के बारे में की गई हैं। सत्तारूढ़ दल अपने राजनैतिक उद्देश्यों को पूरा करने के लिए इस प्रकार की कार्यवाही करने की चेष्टा करेगा ही जो कि एक भ्रष्ट आचरण होगा। निर्वाचन विधि में इन महत्वपूर्ण बातों की व्यवस्था न होने की स्थिति में जनता के मन में इसके बारे में भ्रान्ति पैदा होगी।

कलकत्ता
1 मार्च, 1972

सोमनाथ चटर्जी

GM GIPND—LS III—3167 LS—28-3-72—250